आँखों की सुइयाँ

लेखक :—मौलाना सय्यद अबुल हसन अली नदवी

प्रकाशक :

पयामे इन्सानियत फोरम

पो० बा० ९३, नदवा, लखनऊ ।

www.abulhasanalinadwi.org

आँखों की सुइयाँ

भारत की कहानियाँ अपने अन्दर बड़े-बड़े तथ्य रखती हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इस देश के ज्ञानियों ने कहानियों के रूप मे जीवन की रहस्यमय गुत्थियों को सुलझाया और गूढ़तम समस्याओं को हल किया है या फिर नीरस वास्तविकताओं को चलते-फिरते जीवन में परिणत करने का प्रयत्न किया है। हम इन छोटी-छोटी कहानियों की सहायता से जीवन के महान तथ्यों का दिग्दर्शन तथा मनन कर सकते हैं।

बचपन में हमने जो कहानियाँ सुनी थीं और जो दिमाग के परदे में छिपी थीं उनमें एक ऐसी कहानी भी थी जिसमें किसी अत्याचार-पीड़ित दुखिया स्त्री की वेदनापूर्ण कथा वर्णन की गयी थी। इस स्त्री के सम्पूर्ण शरीर में सुइयाँ चुभी हुई थीं। एक दूसरी चालाक स्त्री दिन भर उसकी सुइयाँ निकालती रहती थी मगर आँखों की सुइयाँ छोड़ देती थी। इतने में शाम हो जाती थी। दूसरे दिन प्रातःकाल होते ही फिर नई सुइयाँ आप ही आप उसके शरीर में चुभ जाती थीं और वही दूसरी स्त्री फिर दिन भर निकालती रहती थी और शाम होते-होते आँखों की सुइयाँ छोड़ देती थी। हमें कहानी के इतने ही भाग से मतलब है।

आप विचार करेंगे तो अत्याचार-पीड़ित मानवता के साथ दीर्घ काल से यही व्यवहार होता चला आ रहा है। उसका सम्पूर्ण शरीर सुइयों से छलनी हो रहा है। शरीर के सभी अंग-प्रत्यंगों में सुइयाँ चुभी हुई हैं। कुछ सहानुभूति युक्त हाथ उसकी यह सुइयाँ निकालने के लिए उठते और आगे बढ़ते हैं किन्तु हर बार आँखों की सुइयाँ छोड़ देते हैं और उसकी मुक्ति का कार्य अपूर्ण रह जाता है। जिसका परिणाम यह होता है कि दूसरे दिन वह पूर्ववत घायल और विपदग्रस्त दिखाई देने लगती है और पुनः परिश्रम करना पड़ता है।

www.abulhasanalinadwi.org

मानवता, एक पूर्ण मानव शरीर तथा मानव अस्तित्व की प्रतिनिधि है। वह जीवन-कार्यालय के समस्त विभागों की अध्यक्ष है। उसके साथ शरीर भी है, पेट भी है, मन भी है, मस्तिष्क भी है और आत्मा भी है। फिर इन सब अगों के साथ कुछ विपत्तियाँ और कुछ दुख भी हैं। यही उसके शरीर की सुइयाँ हैं जो उसको दुर्बल तथा शक्तिहीन किये हुए हैं।

क्षुधा, अनशन, दुर्भिक्ष तथा शुद्ध भोजन की अप्राप्ति ये पेट की सुइयाँ हैं। निस्संदेह इनसे मानवता को कष्ट और दुख होता है। मानव-ससार का यह दुर्भाग्य है और जीवन की यह बड़ी लज्जाजनक अवस्था है कि प्रकृति की अपूर्व दानशीलता तथा खाद्य-सामग्री की यथेष्टता के होते हुए भी कतिपय व्यक्तियों के अनुचित आधिपत्य अथवा किसी शासन-व्यवस्था के निरंकुश व्यवहार के कारण मनुष्यों की भारी संख्या को पेट भर भोजन प्राप्त न हो सके और वह अपने स्वाभाविक अधिकारों और आवश्यक जीवन-सामग्री से वंचित रहें। इस पर शोक, क्रोध, क्षोभ तथा असन्तोष प्रगट करना, और इस अवस्था के विरुद्ध प्रयत्नशील होना एक स्वाभाविक बात है जिस पर आश्चर्य प्रकट करने अथवा दूसरों को लज्जित करने का कोई अवसर नहीं।

मनुष्य शरीरधारी है, शरीर सर्दी और गर्मी महसूस करता है। इसीलिए उसे वस्त्र की आवश्यकता है। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए वस्त्र-उत्पादन की चीजें और वस्त्र-निर्माण करने वाले हाथ-पाँव पैदा किये गये। फिर कैसी अन्याय की बात होगी कि कुछ लोग आवश्यकता से अधिक वस्त्रों का उपयोग करें या उन्हें बक्सों में बन्द करके रखें, या जीवधारी मनुष्य के काम आने वाले वस्त्र दीवार व छत आदि जड़ पदार्थ को ओढ़ायें। और उसका परिणाम यह निकले कि कुछ लोग सर्दी से ठिठुर कर मर जायें या उनको शरीर ढकने के लिये भी कपड़ा न मिले।

www.abulhasanalinadwi.org

मनुष्य मन रखता है, उसकी कुछ उचित इच्छाएँ हैं जिनका पूरा न होना अनीति तथा अत्याचार होगा। वह मस्तिष्क रखता है इसलिये विद्या तथा ज्ञान से उसका वंचित होना, उन्नतिशील विचार तथा विशुद्ध विवेक-शक्ति से खाली रहना केवल अन्याय ही नहीं बल्कि जीवन-व्यवस्था की भारी त्रुटि होगी। इस अनीति और इस त्रुटि को दूर करना किसी भी शिष्ट व्यक्ति अथवा सभ्य समूह का नैतिक तथा धार्मिक कर्तव्य है।

सभ्यता व संस्कृति को फलने-फूलने और मनुष्यों की शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक शक्तियों को यथेष्ट रूप से विकसित होने का सुअवसर उस समय प्राप्त होता है जब उनके मार्ग में कोई निरंकुश शक्ति बाधक न हो। साधारणतः देखा गया है कि एक विदेशी सरकार जीवन-निर्वाह के साधनों पर आधिपत्य जमा लेती और उनके वितरण का कार्य अपने अन्यायपूर्ण हाथों में ले लेती है। उसकी सत्ता के अन्तर्गत पराधीन जाति की उचित भावनायें शिथिल पड़ जाती हैं, मानसिक शक्ति के सोते सूख जाते हैं और वह अपनी जन्म-भूमि में भी बन्दियों के समान जीवन व्यतीत करने लगती है। इसीलिए पराधीनता और दासता मानवता के लिए एक भारी रोग व एक भारी विपत्ति है और उसका दूर करना जीवन के वास्तविक सुखों की प्राप्ति के लिए अनिवार्य है।

अतएव दुर्भिक्ष, भोजन की अप्राप्ति, वस्त्र का अभाव, अज्ञानता और पराधीनता ये वह सुइयाँ हैं जो मानव शरीर का बेधन करती रहती हैं। उनका उन्मूलन मानवता की सेवा है।

मगर क्या मनुष्यता के दुःख और उसके रोग केवल यही हैं? क्या इन सुइयों के निकल जाने पर उसके शरीर को सुख, मन को शान्ति और हृदय को आनन्द प्राप्त हो जायेगा? क्या इतना हो जाने पर उसके नेत्रों की खटक और उसकी अन्तरात्मा की वेदना दूर हो

www.abulhasanalinadwi.org

जायेगी ? हम देखते हैं कि मनुष्यता के दुःखों और संकटों का अवसान केवल इतने ही पर निर्भर नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति को पेट भर भोजन, आवश्यक वस्त्र, और उचित इच्छाओं की पूर्ति की सामग्री एवं शिक्षा के साधन प्राप्ति हो जायें। उसकी आँखों में जो विषैली सुइयाँ चुभी हुई हैं वह कुछ और ही हैं और उन्हीं के कारण समाज अपनी इच्छित वस्तुओं की प्राप्ति के बाद भी प्रति क्षण कराहता, तड़पता और भीतर ही भीतर घुलता रहता है।

हम देखते हैं कि मनुष्य इतने ही पर संतोष नहीं कर लेता कि उसे पेट भर कर भोजन, अपनी और अपने परिवार की आवश्यकता भर का वस्त्र और पर्याप्त जीवन-सामग्री प्राप्त हो गई है। बल्कि उसके अन्दर इस स्वाभाविक पेट के अलावा एक और बनावटी पेट पैदा हो जाता है। यह लालसा और लोलुपता का पेट है जो नरक के समान هل من مزيد (हल मिम् मज़ीद कुछ और है) ही पुकारता रहता है। उसे धन का मोह केवल इसलिए नहीं कि वह जीवन सामग्री प्राप्त करने का साधन है बल्कि यह मोह बिना किसी लक्ष्य तथा उद्देश्य के होता है कि चाहे जितनी मात्रा में प्राप्त हो जाये उसका मन संतुष्ट नहीं होता।

धन के इस अपार मोह के कारण ही वह बेझिझक अनेक अपराध करता रहता है। भ्रष्टाचार, चोरबाजारी और नफाखोरी इसी धन की बढ़ी हुई लालसा और ऐसी ही मानसिक वृत्तियों के कुपरिणाम हैं।

यदि संसार के नैतिक इतिहास का मनन पूर्वक अध्ययन किया जाय और पक्षपात से रहित होकर कुव्यवस्थाओं, दुराचारों और नागरिक तथा सामाजिक जीवन की कठिनाइयों के वास्तविक कारण ढूंढ़े जायें तो उनकी तह में मनुष्य की उचित इच्छाओं और वास्तविक आवश्यकताओं का हाथ बहुत कम मिलेगा। उनकी तह में साधारणतः अनुचित इच्छायें तथा बनावटी आवश्यकतायें ही निकलेंगी। आप स्पष्ट

www.abulhasanalinadwi.org

रूप से देखेंगे कि इन्ही अनुचित इच्छाओं और बनावटी आवश्यकताओं ने नागरिक जीवन में नई-नई उलझनें पैदा कर दीं और शासन-व्यवस्था के संचालन में विविध अड़चनें तथा कठिनाइयाँ डाल रखी हैं और लोगों को अत्याचार, लूट-खसोट, भ्रष्टाचार, सट्टेबाजी, नफ़ाखोरी, धोखेबाज़ी आदि नाना प्रकार के समाज-विरोधी कार्यों पर उकसाया जिनके कुप्रभाव से बड़े-बड़े देश और बड़े-बड़े राज्य "अंधेर नगरी चौपटराज" बनकर रह गये।

आज भी यदि वर्तमान कठिनाइयों और विविध सामाजिक बुराइयों की छान-बीन और जाँच पड़ताल की जाय तो स्पष्ट रूप से पता चल जायेगा कि वर्तमान अशान्ति तथा असन्तोष का कारण यह नहीं है कि जनता के अधिकांश लोगों को जीवन की आवश्यक सामग्री प्राप्ति नहीं होती या उनकी उचित इच्छाएँ पूरी नहीं होतीं या देश में भूखों और नंगों की संख्या बहुत बढ़ गई है। यदि न्याय पूर्वक देखा जाय तो इन भूखों और नंगों ने किसी का कुछ नहीं बिगाड़ा। बिगाड़ा उन लोगों ने है जिनके पेट भरे हुए हैं। इन लोगों का मन धन से किसी तरह नहीं भरता। वास्तविक जरूरतों का तो नाम बदनाम है। उनकी तालिका अधिक लम्बी नहीं है। सारी खराबी बनावटी ज़रूरतों ने पैदा की है, जिनकी तालिका जो पहिले ही कुछ कम लम्बी नहीं थी, निरंतर बढ़ती ही जाती है और किसी-किसी जगह इतनी बढ़ जाती है कि पूरे मुहल्ले और कभी सम्पूर्ण नगर की सम्पत्ति एक व्यक्ति के लिए पर्याप्त नहीं होती।

आज यह भयंकर मंहगाई, वस्तुओं का अभाव और धन की बाहुल्यता क्यों है ? क्या इसका कारण यह है कि देश की अधिकांश जनता नंगी और भूखी है ? नहीं, वास्तविक कारण यह है कि धन की लोलुपता बढ़ गयी है। शीघ्र ही अधिक धनी बन जाने की उत्सुकता, उन्मत्तता की सीमा तक पहुंच गई है। सन्तोष लुप्त प्राय हो चुका है। अहंकार, छल, प्रपंच, आदर, प्रतिष्ठा की अभिलाषा और नागरिकता का प्रदर्शन मात्र लोगों के स्वभाव में दाखिल हो चुके हैं।

www.abulhasanalinadwi.org

आज जिस चीज ने जीवन को यन्त्रणा और संसार को यन्त्रणालय बना रखा है और जिसका प्रत्येक अवस्था में सामना करना पड़ता है वह है बढ़ा हुआ भ्रष्टाचार, अन्धाधुन्ध चोरबाजारी और अत्याचार पूर्ण नफ़ाखोरी। मगर क्या यह अपराध क्षुधा और नग्नावस्था की विवशता के कारण किये जाते हैं? कदापि नहीं। यह उसी वर्ग के लोगों की करतूतें हैं जिसे अपनी आवश्यकता से अधिक खाद्य वस्तुयें, वस्त्र तथा अन्य जीवन-सामग्री प्राप्त हैं। हजारों मुजरिमों में शायद ही कोई ऐसा मिले जो भोजन का मुहताज और कपड़ों का जरूरतमन्द हो। इन अपराधों की तह में उन खाते-पीते और धनाढ्य लोगों ही का हाथ मिलेगा जिनके पास न तो जीवन निर्वाह के साधनों व सामग्री की कोई कमी है, न जुर्म के लिए कोई विवशतापूर्ण कारण है।

वास्तव में मनुष्यों की स्वाभाविक और उचित जरूरतों का मामला कोई कठिन और उलझा हुआ मामला नहीं है। यह बिल्कुल मुमकिन है कि किसी देश में प्रत्येक व्यक्ति को पेट भरकर भोजन, जरूरत भर का वस्त्र और आवश्यक जीवन-सामग्री मिल जाये। मगर क्या संसार का कोई बड़े से बड़ा देश और उत्तम से उत्तम शासन-व्यवस्था किसी कम से कम आबादी की भी, उसकी बनावटी और कल्पित आवश्यकताओं को पूरा कर सकती है या किसी एक व्यक्ति ही के बनावटी पेट को भर सकती है जिसकी झूठी भूख सम्पूर्ण जाति की जीविका का भक्षण करके भी नहीं मिटती?

फिर जब प्रश्न असली जरूरतों का नहीं बल्कि फ़र्ज़ी जरूरतों का है और रोग सच्ची भूख का नहीं, झूठी भूख का है तो कोई ऐसी सामाजिक व्यवस्था तथा आर्थिक योजना, जो समाज की आन्तरिक दुर्बलता और नैतिक बुराइयों को दूर नहीं कर सकती, जो मनुष्यों का केवल पेट भरने और शरीर ढकने की जिम्मेदारी लेती है और जो मानसिक वृत्तियों को वश में रखने की जगह उनमें उत्तेजना पैदा करती

www.abulhasanalinadwi.org

है, वह किसी भी समाज को आन्तरिक रूप से संतुष्ट और किसी भी देश को जीवन की प्रस्तुत कठिनाइयों से मुक्त कैसे कर सकती है ?

गौर से देखा जाय तो रिश्वत सतानी, चोरबाजारी, हद से ज्यादा नफ़ाखोरी और इसी तरह के दूसरे समाजिक तथा नैतिक अपराध ही असली गुत्थी नहीं हैं। असली गुत्थी तो वह मानसिक वृत्ति और वह स्वभाव है जो इन कुत्सित कार्यों, दुराचारी और न्याय तथा नीति के विरुद्ध कार्यवाहियों पर आमादा करता रहता है। जब तक इस मनोवृत्ति को दबाया न जायेगा और इस स्वभाव में परिवर्तन न होगा, उस समय तक इन बुराइयों तथा अपराधों का स्थाई रूप से अवसान नहीं हो सकता। यदि एक द्वार बन्द किया जायेगा तो दस द्वार खुल जायेंगे। मनुष्य का मन अपनी इच्छाओं की पूर्ति और अपनी वासनाओं की तृप्ति के लिये बहुत से चोर दरवाजे रखता है। यदि उसे उचित नियन्त्रण में न रखा जाये तो उसकी राह रोक कर कोई उसे विवश नहीं कर सकता। उसे अपना मतलब निकालने के लिये सैकड़ों बहाने आते हैं। वह आज़ाद होकर किसी न किसी तरह अपना मतलब पूरा कर ही लेता है।

वर्तमान जीवन का मौलिक दोष यह है कि सम्पूर्ण समाज का अन्तःकरण अशुद्ध, मन दोषी और मस्तिष्क स्वार्थी हो गया है। उसका एक व्यक्ति अपने स्वार्थ की खातिर बड़े-बड़े जीवन-सिद्धान्त और नैतिक नियम को ठुकराने में किसी प्रकार का संकोच और कोई भय अनुभव नहीं करता। यदि वह किसी चीज के प्रति रक्षक बनाया अथवा विश्वस्त समझा जाता है तो वह स्वयं ही उस चीज को हड़प कर लेने में निर्भय हो जाता है। यदि किसी राष्ट्रीय व सामाजिक संस्था का अध्यक्ष अथवा सदस्य चुना जाता है तो उसे अपने एक छोटे से लाभ के लिए देश अथवा जाति व समूह के बड़े से बड़े लाभ को नष्ट करने में तनिक भी संकोच नहीं होता। यदि वह पराधीन है तो कामचोर,

www.abulhasanalinadwi.org

कायर और कर्त्तव्यहीन है। वह अपने किसी निजी लाभ अथवा व्यक्तिगत ईर्षा-द्वेष के कारण एक घण्टे के काम में एक महीना लगा सकता है और इस तरह अपने थोड़े से लाभ के लिये शासन-व्यवस्था को असफल बना सकता या बदनाम कर सकता है। यदि वह अधिकारी या अध्यक्ष है तो मित्रों और नातेदारों की बेजा तरफदारी या अपने कुटुम्बियों को अनुचित रीति से लाभ पहुँचाने की खातिर अनुशासन की सीमा उल्लंघन करके राष्ट्र तथा देश को हानि पहुँचाता है। यदि व्यापारी है तो धन की अनावश्यक वृद्धि के हेतु चोरबाजारी और नफ़ाखोरी करके लाखों दीन-दरिद्रों को पेट की मार मारता और दाने-दाने को तरसाता है। यदि वह महाजन है तो सूद-व्याज द्वारा गरीबों का रोम-रोम ऋण-शृङ्खला में जकड़ लेता और उन्हें पैसे-पैसे को मुहताज बना देता है।

व्यक्तिगत रूप ही से नहीं बल्कि सामूहिक रूप से भी बड़ी-बड़ी जमातों और जातियों पर स्वार्थपरता का यह भूत सवार हो गया है। राजनीतिक पार्टियाँ साम्प्रदायिक पक्षपात में फंस गई हैं। यूरोप तथा अमेरिका जैसी सरकारों पर संकीर्ण रूप से राष्ट्रीय हितों का रोग छाया हुआ है, जिनके पैरों के नीचे छोटी और बलहीन जातियाँ कुचली जा रही हैं। इस राष्ट्रीय स्वार्थपरता ने संसार को व्यापार की मंडी या लोहार की भट्टी और ईश्वर की शान्तिमय भूमि को एक वृहत् युद्धक्षेत्र बना रखा है। इसी कौमी खुदगर्जी के कारण बड़ी से बड़ी असैद्धान्तिक तथा अनैतिक कार्यवाही को भी जायज और उचित ठहरा लिया जाता है। एक जाति पर दूसरी जाति का प्रभुत्व स्थापित कर दिया जाता है। एक जाति को दूसरी जाति के हाथ भेड़-बकरियों के समान बेच दिया जाता है। संयुक्त देश के टुकड़े-टुकड़े कर दिये जाते हैं। यूरोप की इसी खुदगर्जी और इसी स्वार्थपरता ने पहले अरबों को तुर्कों के खिलाफ उकसाया और अखिल अरब राज्य का स्वप्न दिखाया, फिर इसी स्वार्थ ने सीरिया जैसे छोटे प्रदेश में स्थाई रूप से चार शासन-व्यवस्थायें स्थापित

www.abulhasanalinadwi.org

करा दीं, फिर इसी ने यहूदियों को यहूदी जन्म-भूमि का सुनहरा स्वप्न दिखाया। आज भी फिलिस्तीन में जो कुछ हो रहा है और उसकी गुत्थी जिस तरह उलझती जा रही है, वह अमेरिका, ब्रिटेन और रूस की इसी राष्ट्रीय स्वार्थपरता का परिणाम है। हिन्दुस्तान में सौ वर्ष से जो कुछ होता रहा है और फिर अन्त में जिस तरह इस शान्तिप्रिय देश को बलि वेदी बनाकर छोड़ा गया है वह या तो सीधे ब्रिटेन की ऐसी ही राष्ट्रीय स्वार्थपरता का चमत्कार है या उसकी पैदा की हुई उस घृणित साम्प्रदायिकता का कुप्रभाव है जिसका विष इस देश की जनता के शरीर में लगातार सौ वर्ष तक फैलाया जाता और अपना काम करता रहा है।

पाश्चात्य सभ्यता तथा यूरोपियन राजनीति की लायी हुई इस राष्ट्रीय वेशधारी साम्प्रदायिकता ने १९४७ ई० में यहाँ की जनता को इतना अन्धा और पागल बना दिया कि उसने ऐसे पाशविक कर्म कर डाले जिनके आगे चौपायों तथा दरिन्दों को भी लज्जा आयेगी और राक्षसों की गर्दन भी शर्म से झुक जायेगी और कोई आगामी इतिहास-कार इन घटनाओं की पुष्टि में संकोच ही करेगा।

फिर इस स्वार्थपरता ने सम्पूर्ण संसार में और प्रत्येक देश के सभी वर्गों में एक ऐसा विशेष स्वभाव पैदा कर दिया है जिसका गुण यह है कि मनुष्य अपने अधिकारों की माँगों पर तो कटिबद्ध रहता है किन्तु अपने कर्तव्य-पालन में कायर बना रहता है और बहाने गढ़ा करता है। इस भावना और इस आचरण ने सारे संसार में व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप से साम्प्रदायिकता के भाव और परस्पर ईर्षा-द्वेष का घृणित वातावरण पैदा कर दिया है। प्रत्येक व्यक्ति अपना हक तो माँगता है परन्तु दूसरे का हक देने से भागता है।

यदि संसार पर दृष्टि डाली जाय तो सारा संसार हक माँगने वालों की एक बस्ती प्रतीत होगा जिसमें अधिकारों की माँग हर जिह्वा पर होगी परन्तु कर्तव्य-पालन का भाव किसी हृदय में न होगा। जिस

www.abulhasanalinadwi.org

बस्तीका प्रत्येक व्यक्ति अपना हक माँगता हो मगर कोई अपना फ़र्ज़ न पहचानता हो तो उस बस्ती में जीवन की उलझनों तथा कठिनाइयों का सहज ही अनुमान किया जा सकता है और वहाँ की परस्पर खिचावट और वैमनस्य को मनुष्य का कोई उपाय तथा प्रयत्न दूर नहीं कर सकता ।

हमें इस स्वार्थपरता पर कितना ही क्रोध क्यों न आवे और उससे अपने नित्य प्रतिदिन के जीवन में कैसी ही कठिनाइयां क्यों न अनुभव हों, यह है सर्वथा एक स्वाभाविक चीज । जब यह मान लिया जाय कि इस जीवन के पश्चात् कोई और जीवन नहीं, इस भौतिक जीवन के आनन्दों तथा लाभों के अतिरिक्त कोई आध्यात्मिक तथ्य मौजूद नहीं, और हमारा साहित्य समाज और सम्पूर्ण वायुमण्डल यही शिक्षा देता हो, इसी के उदाहरण प्रमाण तथा कसौटी के रूप में उपस्थित किये जाते हों, सम्पूर्ण जीवन-व्यवस्था इसी धुरी पर चक्कर काट रही हो, पुनर्जीवन की प्रत्येक कल्पना लुप्तप्राय हो चुकी हो, आध्यात्मिक सत्य तथा जीवन के सूक्ष्मतम तथ्यों ने आधिभौतिक आवश्यकताओं के लिये अपना स्थान रिक्त कर दिया हो, पेट और जिस्म ने फैल कर जीवन की सारी व्यापकता को घेर लिया हो और अन्य समस्त वास्तविकताओं को निगाहों से ओझल कर दिया हो, वहाँ मनुष्य कैसे स्वार्थी न होगा ? आदि से अन्त तक जीवन के इन सुखों और आनन्दों का भोग क्यों न करेगा ? इन लाभों को किस दिन के लिये उठा रखेगा ? इस जीवन का सुख लूटने में किस कारण सावधानी और इहतियात से काम लेगा ? विचार कीजिये जब मनुष्य को किसी अलौकिक, उच्चतम, सर्वश्रेष्ठ, सर्वोपरि, महा शक्तिशाली, सर्वदर्शी, तथा सर्वज्ञाता प्रभु की सत्ता में पूर्ण विश्वास न होगा और उसके हृदय में उसका अद्वितीय आदर, सम्मान और अपूर्व भय न होगा तो वह अपने जीवन को सुखी बनाने वाली वस्तुओं के प्राप्त करने में किसी प्रकार का संकोच क्यों करेगा ?

www.abulhasanalinadwi.org

फिर जब वर्त्तमान संस्कृति और अर्वाचीन राजनीति ने मनुष्य के जीवन को किसी एक जाति या किसी एक देश के घेरे में सीमित कर दिया है और हर ऐसे विचार और ऐसे भाव को मस्तिष्क से निकाल दिया है जिसका घेरा किसी एक जाति या एक देश से अधिक व्यापक हो और हर ऐसी चीज को मार्ग से हटा दिया है जो मानवता का विस्तृत क्षेत्र तथा अविनाशी जीवन का एक अपरिमित घेरा बनाती हो तो ऐसी हालत में मनुष्य का स्वाभाविक स्वार्थ उन्नतावस्था को प्राप्त होकर भी निज देश तथा निज राष्ट्र के हितों की सीमा से आगे कैसे बढ़ सकता और अपनी उद्देश्य-पूर्ति के हेतु किसी कार्य के उचित व अनुचित होने का ध्यान कैसे रख सकता है ?

यह स्वार्थपरता और यह मतलबपरस्ती समाज तथा राजनीति की सामयिक व्यवस्था का मौलिक दोष है। जब तक इस दोष का अवसान न होगा, सुधार तथा उन्नति का सारा प्रबन्ध व्यर्थ है। राजनीतिक दृष्टि से देश स्वतन्त्र तथा स्वाधीन हो अथवा किसी विदेशी राज्य के पराधीन, जब तक हमारे समाज में स्वार्थपरता का दोष मौजूद है, जब तक खुदगर्जी का भूत सवार है, जब तक धन-सम्पत्ति का बढ़ा हुआ मोह देश की जनता पर छाया हुआ है, जब तक उत्तरदायित्व का विचार लोगों के दिलों से निकला हुआ है, जब तक समाज की हार्दिक इच्छा बनावटी आवश्यकताओं की प्राप्ति तथा मनोकामनाओं की पूर्ति में लिप्त है तब तक ऐसा समाज जीवन के वास्तविक सुखों और स्वतन्त्रता के सुपरिणामों से वंचित ही रहेगा।

हम देख रहे हैं कि समाज पर एक अस्वाभाविक मोटापा छा रहा है। उसकी बाहरी शोभा भी बढ़ रही है। खाद्याभाव तथा वस्त्र हीनता भी धीरे-धीरे समाप्त हो रही है। और कुछ देशों की जनता में जीविका की असमानता भी दूर होती जा रही है। शिक्षा का प्रसार हो रहा है। नये-नये विभाग खुल रहे हैं परन्तु वास्तविक

www.abulhasanalinadwi.org

बात यह है कि समाज आन्तरिक रोग से व्यथित है, जो भीतर ही भीतर घुलाये दे रहा है। जब दिलों में अन्याय ने घर बना लिया हो तो केवल जीविका की असमता मिटा देने से अन्याय का अवसान नहीं हो सकता, और न किसी देश में वास्तविक न्याय तथा सार्वजनिक सहानुभूति की सृष्टि हो सकती है। जीविका उपार्जन के अतिरिक्त भी जीवन के बहुत से क्षेत्र हैं जिनमें मनुष्य को मनुष्य पर अत्याचार करने, उसके हक छीन लेने और कम से कम उसको परेशान करने और दुःख पहुँचाने के अवसर प्राप्त हैं। जब तक अन्याय, अत्याचार तथा स्वार्थपरता का बीज ही हृदयों के अन्तस्थल से निकाल कर न फेंक दिया जायगा और जब तक निष्कर्ष भाव तथा निष्पक्ष विचार से समस्त मानव समाज की सेवा न की जायगी, तब तक नागरिक व्यवस्था, अत्याचार, अन्याय तथा स्वार्थपरता से पाक-साफ़ नहीं हो सकती।

एशिया में अभी जो नये स्वाधीन राज्य स्थापित हुए हैं, या जिन देशों को नई-नई आज़ादी मिली है वह भी इस वास्तविकता को नजर से हटा रहे हैं कि देश की समृद्धि और राष्ट्र की उन्नति केवल ज़िन्दगी के बाहरी रख-रखाव और उसके साधनों की प्राप्ति में नहीं है बल्कि उस उद्देश्य की शुद्धि में है जिसके लिए इन साधनों का उपयोग किया जाता है, या फिर न्याय तथा सहानुभूति के हार्दिक विचारों में है। यह वस्तुएँ किसी यन्त्र अथवा किसी राजनीतिक व्यवस्था द्वारा पैदा नहीं होतीं। यदि पैदा हो सकतीं और वह जीवन-निर्वाह के साधनों की प्राप्ति तथा देश के सगठन, वास्तविक समृद्धि, शान्ति और सुख-सम्पन्नता के लिए पर्याप्त होतीं तो योरोप तथा अमेरिका के सुदृढ़ तथा सुव्यवस्थित राज्य, सुख व शान्ति के केन्द्र तथा स्वर्ग के समान होते। मगर सब जानते हैं कि इन देशों को वास्तविक सुख, शान्ति प्राप्त नहीं। उनकी आन्तरिक उलझनें कोई लुकी-छिपी बात नहीं है।

www.abulhasanalinadwi.org

उच्च उद्देश्यों, शुद्ध विचारों और न्याय तथा सहानुभूति के हार्दिक भावों की सृष्टि, एक शक्तिशाली, विशुद्ध, आध्यात्मिक धर्म द्वारा ही हो सकती है जो मनुष्य के शरीर के साथ ही उसके मन पर भी राज करे। जो उसकी इच्छाओं को अपने नियन्त्रण में रखे। जो आध्यात्मिक बल द्वारा उसे समाज के प्रति सेवा, और बलिदान का सबक पढ़ा सके। जो उसे इस क्षणिक जीवन के अतिरिक्त एक अविनाशी जीवन का भी दिग्दर्शन करा सके। और जिसके शौक में वह अपने व्यावहारिक जीवन में यथोचित सावधानी तथा संयम से काम ले सके। जो उसे खाने, पीने, पहनने, ओढ़ने, धन तथा ऐश्वर्य की प्राप्ति और वासनाओं की पूर्ति के लिए विवेक तथा बुद्धि का आश्रय लेना सिखा सके। जो मानवता और जीवन के अर्थ बतला सके और समझा सके कि मनुष्यता कितनी श्रेष्ठ चीज है और मानवता के उद्देश्य कितने ऊँचे हैं। ऐसे ही सत्य-धर्म की शिक्षा-दीक्षा उस स्वार्थपरता का अवसान कर सकती है जिससे हमारी वर्तमान राजनीतिक तथा सामाजिक व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो रही है।

वे हाथ शुभ हैं जो अत्याचार पीड़ित मानवता के शरीर की सुइयों को निकालने के लिए आगे बढ़ें। मगर स्मरण रहे कि आँखों की सुइयाँ निकाले बिना उसको सुख की नींद और मन की शान्ति प्राप्त नहीं हो सकती।

स्वतन्त्रता तथा स्वाधीनता की प्राप्ति बड़ा ही आवश्यक कार्य है। देश से दरिद्रता और दुर्भिक्ष को दूर करना, सामाजिक अन्याय को समाप्त करना, प्रत्येक व्यक्ति के लिए जीवन-निर्वाह के आवश्यक साधन जुटाना, ये सभी कार्य शुभ और उत्तम हैं और जो लोग इन महत्वपूर्ण कामों में भाग लें वे जनता की बधाई के पात्र हैं। परन्तु उन्हें उस समय तक अपने कामों को अधूरा और अपने प्रयत्न को अपूर्ण ही समझना चाहिये जब तक कि मानवता की आँखों की सुइयां

www.abulhasanalinadwi.org

दूर न हो जायें। जब तक मनुष्य का अन्तःकरण पवित्र तथा उसका मन संयत न हो जाये और उसके हृदय तथा मस्तिष्क में उत्तरदायित्व के भाव तथा भावनायें जागृत न हो जायँ, उसकी दृष्टि पेट भरने और शरीर ढकने की सीमा लाँघकर बिना किसी भेद-भाव तथा पक्षपात के कुल मानव समाज के हितों पर न जम जाये और उसमें ऐसी उदार दृष्टि और ऐसा उच्च साहस न पैदा हो जाये कि दूसरों के साथ न्याय करने तथा अपनी इच्छाओं के विरुद्ध स्वयं अपने व्यवहार में उसे कोई कठिनाई न दीख पड़े।

कई बार इस शरीर की सुइयाँ निकालने के लिए हितैषियों के सहानुभूतिपूर्ण हाथ बढ़े किन्तु हर बार उन्होंने आँखों की सुइयाँ छोड़ दीं और रात हो गई। कई देशों को उसके सपूतों ने अपनी वीरता तथा बलिदान द्वारा स्वतन्त्र कराया। कई देशों के नेताओं ने अपने दृढ़ संकल्प तथा अटूट प्रयत्न द्वारा निरंकुश साम्राज्य का तख्ता उलट कर उनमें प्रजातन्त्र राज्य स्थापित किया। परन्तु हृदय की फाँस हृदय ही में रह गई। देशो के प्रबन्धकर्ता और शासक बदल गये, शासन की व्यवस्था में थोड़ा-बहुत परिवर्तन हुआ। मगर शासन-सत्ता में जो स्वभाव और शासन प्रणाली में जो विचारधारा काम कर रही थी उसमें कोई परिवर्तन दृष्टिगोचर नहीं होता। लोग आज भी पेट की सुइयाँ देख रहे हैं और आँखों की सुइयों की ओर से आँखें मूँद ली हैं। मानवता हाहाकार कर रही है कि रात आने से पूर्व शरीर की सुइयों के साथ आँखों की सुइयाँ भी निकाल दी जायँ जिससे कि उसे वास्तविक शांति, यथेष्ट सुख तथा अविनाशी जीवन प्राप्त हो।

———

www.abulhasanalinadwi.org

प्रतिज्ञा

मैं जिस सर्वशक्तिमान् एवं अन्तर्यामी को अपना स्वामी एवं पालनहार मानता हूं, उनकी सौगन्ध लेकर यह प्रतिज्ञा करता हूं कि—

१—यदि मैं विद्यार्थी हूं तो मेरा उद्देश्य शिक्षोन्नति, सामाजिक भलाई तथा मानवता की सेवा करना और एक अच्छा नागरिक बनना होगा ताकि भविष्य में इस देश का नेतृत्व संभालने के योग्य बन सकूं। मैं हिंसा एव आज्ञोल्लघन से बच कर अपनी आयु, यौवन, शिक्षा एवं क्षमता को देश की सेवा करने और सर्वसाधारण के हित में अर्पित करूंगा।

२—यदि मैं सेवा कार्य में हूं तो मेरा सिद्धान्त सत्यता, ईमानदारी तथा सर्वसाधारण की सेवा करना होगा और मैं भ्रष्टाचार, छल-कपट, कार्य में सुस्ती तथा कामचोरी और सगे सम्बन्धियों के प्रति पक्षपात से बचंगा।

३—यदि मैं व्यापारी हूं तो अनियमित भण्डारण, चोरबाजारी अनुचित लाभ तथा सर्वसाधारण का आर्थिक शोषण करने से बचूंगा।

४—यदि मैं अध्यापक, लेखक, पत्रकार अथवा कवि हूं तो ऐसे विचारों एवं उद्देश्यों के प्रकाशन में रुचि एवं योगदान करूंगा, जो मनुष्यों के प्रति मित्रता का भाव उत्पन्न करते हैं तथा जो मन एवं वातावरण के अनुचित आकर्षण को रोकने, घृणा एवं क्रोध से बचने और गन्दे विचारों पर नियन्त्रण प्राप्त करने में सहायक होते हैं।

५—यदि मैं उत्तरदायी पद पर आसीन रहूंगा तो मैं अपनी सीमा के कार्य-वृत्त में न्याय करने और हकदार को उसका उचित अधिकार दिलाने का पूर्ण प्रयास करूंगा।

www.abulhasanalinadwi.org